

राज योग

विशेष लेख :- योगीराज अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज



हमने इससे पहले किसी लेख में 'सहस्र दल कमल' का वर्णन किया है। सहस्र दल कमल ही एक ऐसा स्थान है जहाँ पहुँचकर शक्ति रूप जीवात्मा शिव रूप परमेश्वर में लय होकर अपने आपको शिव बना लेता है किन्तु साधक को इस बात का पूरी तरह से ख्याल रखना चाहिये कि वह अपनी धारणा को पहले से ही परिपक्व रखता चला जाये। 'साधनासिद्ध' मन ही सब प्रकार की साधनाओं में परिपूर्णता को प्राप्त किया करता है। हमारे शास्त्र का एक सिद्धान्त है जिसको योगियों ने अपनाया है। साधकों के लिये यह अटल है।

अर्थात्—

यत्र मनोलीयते,

तत्र प्राणोलीयते।

यत्र प्राणोलीयते,

तत्र मनोलीयते॥

अर्थात् जहाँ मन लय हो जाता है वहाँ प्राण लय हो जाता है और जहाँ प्राण लय होता है वहाँ ही मन लय हो जाता है। यह योगियों का अकाट्य सिद्धान्त है। योग के दो ही आधार हैं एक मन और दूसरा प्राण। मन की साधना को राजयोग कहते हैं और प्राण की साधना को हठयोग कहते हैं।

नृणामे को गम्य स्त्वमसि,

पय सामर्णवइवः।

जिस प्रकार से सभी नदी-नालों का गम्य-स्थान समुद्र होता है, इसी प्रकार से प्राणिमात्र के गम्य स्थान भगवान सदाशिव हैं और उनको प्राप्त करने के लिये, एक मात्र साधन योग है। इस योग के अन्दर सभी

साधनायें निहित हैं राजयोग, हठ योग, लय योग मंत्रयोग, भक्तियोग, जययोग आदि बहुत से भेद हैं। किन्तु उनमें से साधना केवल दो ही प्रकार की, की जाती हैं। चाहे हम मनोलय वाली साधना कर लें या प्राणलय वाली। प्राणलय वाली साधना करने वाला व्यक्ति हठयोग का आश्रय लेता है। जो लोग हठयोग की साधना करते हैं प्रथम प्राण जय करके विविध नाड़ियों में प्राण का प्रवेश कराना प्राण पर नियंत्रण करके स्फुट प्रज्ञालोक को प्राप्त करना उनका ध्येय रह जाता है। वैसे—

‘सर्वेपदा हस्तिपदे निमग्नाः’

के नियमानुसार हठयोग का भी लक्ष्य राजयोग की प्राप्ति ही है। किन्तु हठयोगी-राजयोग को प्राप्त करने के लिये अपनी आधार भित्ति को पूर्ण परिपक्व कर लेता है। ऐसा योगी पतन से परे हो जाता है। जो लोग बिना हठयोग की साधना के राजयोग के अभ्यास में लगे रहते हैं वे लोग इतनी जल्दी सफलता को नहीं प्राप्त कर सकते जितनी जल्दी एक हठयोगी सफलता को प्राप्त किया करता है। जिन लोगों की ख्याति आजकल अजरत्व अमरत्व में मुख्यतः वे लोग सभी हठयोग की साधना के द्वारा राजयोग की उच्चतम समाधि को प्राप्त हुए। जो लोग बिना हठयोग की साधना किये राजयोग की ओर प्रवृत्त हो जाते हैं वे निरन्तर अभ्यास करते हुए अपने लक्ष्य को तो पा ही लेते हैं किन्तु शरीर इन्द्रिय, मन, बुद्धि और अहंकार पर पूर्ण विजय जिस प्रकार एक हठयोगी प्राप्त करता है उतना जल्दी नहीं कर पा सकते।

शरीरेण जिता सर्वे,
 शरीरं योगिभिर्जितम्।
 तत्कथं कुरुते तेषां,
 सुख दुःखादिकं फलम्॥
 इन्द्रियाणि मनो बुद्धिं
 कामक्रोधादिकं जितम्।
 तेनैव विजितं सर्वं नासौ,
 केनापि बाध्यते॥
 महाभूतानि तत्त्वानि,
 संहतानि क्रमेण च।
 सप्त धातुमयो देहो,
 दग्धो योगाग्निना शनैः॥
 देवैरपि न लक्ष्येत
 योगिदेहो महाबलः।
 भेद बन्धविजिर्मुक्तो,
 नाना शक्तिधरः परः॥
 यथज्ञकाशस्तथा देह
 आकाशदपि निर्मलः।
 सूक्ष्मात्सूक्ष्मतरो दृश्यः
 स्थूलात्स्थूलो जडाज्जडः।
 इच्छारूपो हि योगीन्द्रः
 स्वतन्त्रस्त्वजरामरः।
 क्रीडते त्रिषु लोकेषु
 लीलया यत्रकुत्रचित्॥
 अचिन्त्य शक्तिमान्योगी
 नानारूपाणि धारयेत्।
 संहरेच्च पुनस्तानि
 स्वेच्छया विजितेन्द्रियः॥
 नासौ मरणमाप्नोति
 पुनर्योगबलेन तु।

हठेन मृत एवासौ,
 मृतस्य मरणं कुतः॥
 मरण यत्र सर्वेषां,
 तत्रासौ परिजीवति।
 यत्र जीवन्ति मूढास्तु,
 तत्रासौ मृत एव वै॥
 कर्तव्यं नैव तस्यास्ति,
 कृतेनासौ न लिप्यते।
 जीवन्मुक्तः सदा स्वच्छः,
 सर्वदोष विवर्जितः॥

साधारणतः सारे संसार के लोग शरीर से जीते जाते हैं। शरीर में जिस प्रकार के भी दुःख सुख आदि होते हैं संसार वाले उन दुःखों से दुःखी रहते हैं। केवल मात्र एक योगी ही अपनी साधनाओं के द्वारा शरीर पर अधिकार प्राप्त कर लेते हैं। फिर उनको दुःख सुख आदि शरीर धर्मों का अनुभव नहीं होता। शनैः शनैः इस प्रकार के हठयोगी इन्द्रिय, मन, बुद्धि आदि को जीतकर काम, क्रोधादि पर अपना नियन्त्रण प्राप्त कर लेते हैं। ऐसे अभ्यास के फलस्वरूप वह योगी सभी पर अधिकार पा जाते हैं और किसी के भी बन्धन में नहीं आते। वह अपनी योगाग्नि के द्वारा सप्त धातुमय शरीर को जला डालते हैं। देवता भी उनके शरीर को नहीं देख पाते। वे भेद बन्ध आदि से मुक्त होकर बहुत प्रकार की शक्तियों को पा लेते हैं। जिस प्रकार से आकाश निर्मल है इसी प्रकार योगी का शरीर भी निर्मल रहता है। योगी का शरीर सूक्ष्म से सूक्ष्म, स्थूल से स्थूल और जड़ से जड़ है योगी पुरुष परम स्वतंत्र अजर-अमर और इच्छानुरूप होते हैं और तीनों लोकों में स्वतन्त्र विचरा करते हैं। वे अचिन्त्य शक्तिवान योगी चाहें तो हजारों प्रकार के रूप धारण कर लें और उनका उपसंहार भी कर लें। वह योगी जिसने हठयोग के द्वारा अपने आप को मार लिया है वह फिर किसी के मारने से नहीं मरते। ना ही उनका संसार में कोई

कर्तव्य रहता है। सब दोषों से रहित हो जाते हैं। उनके मुकाबले में कोई भी शक्तिशाली नहीं रहता किन्तु इस प्रकार की हठयोग की साधना करने वालों का भी लक्ष्य राजयोग ही रहता है। राजयोग की साधना मन से आरम्भ होती है। राजयोग की साधना में—

यत्र मनोलीयते,

तत्र प्राणोलीयते।

का सिद्धांत चालू रहता है। हठयोग की साधना में प्राण की प्रधानता रहती है और राजयोग की साधना में मन की प्रधानता रहती है। राजयोग की साधना का लक्ष्य सहस्र दल कमल है और हठयोग की साधना का लक्ष्य षट्-चक्रों को भेदन करते हुए प्राण वायु को ब्रह्म रन्ध्र तक पहुँचाना है। क्योंकि प्राणायाम का फल भगवान पतञ्जलिदेव ने योग-दर्शन में 'ततः क्षीयते प्रकाशावरणम्' लिखा है। श्री पतञ्जलिदेव जी ने या हमारे अन्य आचार्यों ने अपने अनुभव के आधार पर जिन-जिन सिद्धांतों की रचना की है वे सभी नितान्त सत्य हैं। उनमें मन्तव्यामन्तव्य का प्रश्न ही पैदा नहीं होता। जो लोग आचार्यों के मतों का अवलम्ब लेकर एवं किसी अनुभवी गुरु के द्वारा शिक्षा पाकर इस पवित्र मार्ग पर चलने की चेष्टा करते हैं उनको अपने अभ्यास का परिणाम शास्त्रोक्त पद्धति से ही सामने आता है जिसको वे जान लेते हैं कि वस्तुतः यथार्थता यही है। राजयोगी एवं हठयोगी की आकृति उनके अन्तर्निहित तेज को प्रकाशित करने लगती है। हठयोग की साधना करने वालों के शरीर में स्वाभाविक कृशता, अल्पमूत्र-पुरुषत्व, स्वर सौष्ठवता एवं शरीर लाघव आदि गुणों को अनुभव करने लगता है इसके अतिरिक्त जो लोग स्वाध्याय, तप या अन्य किसी भी प्रकार की साधना द्वारा परम प्रकाशवान तेज को प्राप्त होते हैं उनके मुख मण्डल से स्वाभाविक ही तेज का प्रकाश होने लगता है वे लोग किसी भी रूप में छुपे हों किन्तु उनका महात्मत्व सर्व साधारण की दृष्टि में आने लगता है। राजयोग की साधना का परिणाम भगवान सदाशिव ने

अपनी शिव-संहिता में बहुत ही ऊँचे शब्दों में वर्णन किया है। राज-योग की साधना का फल बतलाते हुए भगवान सदाशिव इस प्रकार वर्णन करते हैं :—

अत ऊर्ध्व दिव्यरूपं,

सहस्रं सरोरुहम्।

ब्रह्माण्डाख्यस्य देहस्य देहस्य

बाह्ये तिष्ठति मुक्तिदम्॥

कैलासो नाम तस्यैव,

महेशो यत्र तिष्ठति।

अकुलाख्योऽविनाशी च,

क्षय वृद्धि विवर्जितः॥

स्थान स्थानस्य ज्ञानमात्रेण नृणां

संसारेऽस्मिन् सम्भवो नैव भूयः।

भूतग्राम सन्तताभ्यासयोगात्,

कर्तुर्हर्तुस्यच्च शक्तिः समग्रा॥

स्थाने परे हसनिवास भूते

कैलासनाम्नीह निविष्टचेता।

योगी हतव्याधिरधः कृताधिर्षा

युश्चिरं जीवति मृत्यु मुक्तः॥

चित्त वृत्तिर्यदा लीना,

कुलाख्ये परमेश्वरे।

तदा समाधिसाम्येन

योगी निश्चलतां ब्रजेत॥

निरन्तरकृते ध्याने

जगदिस्मरणं भवेत्।

तदा विचित्रसामर्थ्यं,

योगिनो भवति ध्रुवम्॥

अर्थात् तालु के ऊपर के भाग में सहस्रार कमल कहा गया है। सहस्रार तक शरीर की स्थिति ब्रह्मांड के रूप में बतलाई गई है। सहस्रार तक ब्रह्माण्ड का वर्णन

किया गया है उससे आगे व्यापकत्वेन परमात्मा की स्थिति है। जहाँ पर ये स्थान है उसी को महा कैलाश के रूप में माना गया है।

क्षय वृद्धि विवर्जित सदा एकरस शुद्ध चेतन भगवान सदाशिव की स्थिति है। इस के इस स्थान का ज्ञान हो जाने पर संसार के जन्म मरण से छूट जाता है। और स्वयं भगवान सदाशिव के रूप में लय होकर योगी को संहार शक्ति प्राप्त हो जाती है। इसी स्थान में परम हंस तत्त्व प्रकाशित होता है। योगी इस स्थान पर ध्यान करने से जन्म मरण के बन्धनों से मुक्त हो जाता है। अभ्यास करते-करते योगी की वृत्ति इतनी ऊँची उठ जाती है कि जब भी वह इस महाकैलाश का चिंतन करता है तभी बाहर की सुधबुध को बिल्कुल भुला देता है।

तस्माद्गलितपीयूषं,
पिबेद्योगी निरन्तरम्।
मृत्योर्मृत्युं विधायाशु,
कुल जित्वा सरोरुहे॥
अत्र कुण्डलिनी शक्तिर्लय,
याति कुलाभिधा।
तदा चतुर्विधा सृष्टि,
लीयते परमात्मनि॥
यज्ज्ञात्वा प्राप्य विषयं,
चित्त वृत्तिर्विलीयते।
तस्मिन्परिश्रमं योगी,
करोति निरपेक्षकः॥
चित्त वृत्तिर्यदा लीना,
तस्मिन् योगी भवेद् ध्रुवम्।
तदा विज्ञायतः खण्ड,
ज्ञान रूपी निरञ्जनः॥
ब्रह्मांड बाह्ये संचिन्त्य स्वप्रतीक यथेदितम्।
तमावेश्य महच्छून्यं चिन्तयेद् विरोधतः॥

अर्थात् अनुभवी योगियों ने इसी सहस्र दल कमल को भी चन्द्रमा का निवास माना। चन्द्र मण्डल से हर समय अमृत का स्राव होता रहता है जिसको पान करके योगी मृत्यु को जीत लेता है। इसी सहस्रदल कमल में कुण्डलिनी लय होती है। और कुण्डलिनी के लय होने पर चतुर्दल सृष्टि का भी वहाँ लय हो जाता है। सहस्रदल कमल का ज्ञान होने पर चित्त वृत्ति भी वहाँ लय हो जाती है एवं चित्त वृत्ति के लय हो जाने पर अखंड निरंजन परमात्मा का प्रकाश होता है। साधक को चाहिये भीतर बाहर अपने आत्म स्वरूप का चिंतन करता रहे।

आद्यन्तमध्य शून्यं,
तत्कोटि सूर्यसमप्रभम्।
चन्द्र कोटि प्रतीकाशम-
भ्यस्य सिद्धिमाप्नुयात्॥
एतत् ध्यानं सदा कुर्याद्,
नालस्यं दिने दिने।
तस्य स्यात्सकला सिद्धि,
वर्त्सरान्नात्र संशयः॥
क्षणार्धं निश्चलं तत्र,
मनो यस्य भवेद् ध्रुवम्।
स एव यागी सद्भक्तः,
सर्वलोकेषु पूजितः॥
तस्य कल्मषसङ्घातस्त-
त्क्षणादेव नश्यति॥
य दृष्ट्वा न प्रवर्तन्ते,
मृत्यु संसार वर्त्मनि।
अभ्यसेत्तं प्रयत्नेन,
स्वाधिष्ठानेन वर्त्मना॥
एतत् ध्यानस्य माहात्म्यं,
मथा वक्तुं न शक्यते।
यः साधयति जानाति,

सोऽस्माकमति सम्मतम्॥

ध्यानादेव विजानाति,

विचित्र फलसंभवम्।

अणिमादि गुणोपेतो,

भवत्येव न संशयः॥

अर्थात् आदि अंत रहित करोड़ों सूर्यों के समान महान प्रकाश एवं करोड़ों चन्द्रमा के समान शुभ शीतल तेज का जो लोग निश-दिन ध्यान करते हैं वे लोग जल्दी ही सब प्रकार की सिद्धियों को पा जाते हैं। इस ध्यान में जिसका मन आधा क्षण भी लीन हो जाता है वह योगी सर्वलोक पूजित है। एवं सब प्रकार के पाप समूह को जल्दी से जल्दी नष्ट कर डालता है। संसार के जन्म मरण से छूट जाता है। इस ध्यान का महात्म्य कहा नहीं जा सकता। जो इस ध्यान को करता है वही इसके महात्मा को जानते हैं एवं जल्दी ही अणिमादिक सकल ऐश्वर्य को प्राप्त कर लेते हैं। इस राजयोग का सम्बन्ध मन से है। अभ्यासी को चाहिये जल्दी धबराये नहीं प्रत्युत अपने अभ्यास को निरन्तर बढ़ाता रहे। भगवान के उस वचन को हर साधक को याद रखना चाहिये—

कर्मण्येवाधिकारस्ते,

मा फलेषु कदाचन।

मा कर्मफल हेतुर्भुः

मा ते सङ्गोस्त्वकर्मणि॥

अर्थात् मनुष्य को अपने कर्तव्य के पालन में तत्पर रहना चाहिये कर्म-फल के पीछे नहीं पड़ना चाहिये। जो लोग कर्तव्य रहित होकर कर्म फल के पीछे पड़े रहते हैं वे लोग भारी भूल करते हैं। सभी को यह लोकोक्ति याद रखनी चाहिए कि—

मनुष मजूरी देत है,

क्यों राखे भगवान ?

जब मनुष्य पुरुषार्थ करता है तब ईश्वर की ओर से उसकी बराबर सहायता होती है। जो मनुष्य सुकृत मार्ग पर चलता है उसका पुण्यफल उत्तरोत्तर बढ़ता चला जाता है एवं विघ्न बाधायेँ नष्ट होती चली जाती हैं। अतः उपरोक्त राजयोग का महात्म्य भगवान सदाशिव ने जिन शब्दों में वर्णन किया वे सभी पूर्ण सत्य एवं सर्वथा माननीय हैं। कुछ समय के अभ्यास के बाद परिणाम वही दिखलाई देगा जैसा कि उपरोक्त श्लोकों में वर्णित है। अतः अपने मन को शुद्ध शान्त बनाकर के ध्यानपरायण बना लेना चाहिये, जिससे मनुष्य अपने परम पुरुषार्थ के फल को पाकर कृतकृत्य हो सके।

